



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

आत्मबोध एवं तत्त्वबोध साधना का स्वरूप एवं प्रक्रियाएँ – एक विवेचन

डॉ. शोभा पांडे

सहायक आचार्य, योग विज्ञान विभाग

स्नेहा

शोधछात्रा, योग विज्ञान विभाग

स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय, फतेहपुर टांडा,

डोईवाला, देहरादून (उत्तराखण्ड) भारत

एक आत्मा सत्य है उसके अलावा अन्य सभी मिथ्या है।¹ मनुष्य के शरीर में आत्मा ही एकमात्र चैतन्य तत्व है बाकी सभी जड़ प्रकृति से निर्मित है। जो उस चैतन्य आत्मा की शक्ति से ही सक्रिय होकर अपना अपना कार्य करते हैं। यदि किसी चीज में आत्मा नहीं होती तो यह सभी जड़ समान हो जाता है। इसीलिए ही एक सत्य तत्व है। अन्य सभी भ्रांतिवश ही चैतन्य जैसे प्रतीत होते हैं। जो एक मिथ्या धारणा मात्र है इस आत्म तत्व का प्रत्यक्ष अनुभव कर लेना ही मनुष्य की ज्ञानावस्था है। जिससे सत्य व मिथ्या, जड़ व चेतन की भिन्नता का बोध हो जाता है सृष्टि के इस मूल तत्व को जान लेना ही तत्व विवेक है।²

आत्मा का स्वरूप

स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर से भिन्न पांच कोशों (अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनंदमय) से अतीत तीनों अवस्थाओं का साक्षी होकर सच्चिदानंद स्वरूप में जो सदा एक रस विराजमान रहे वह आत्मा है।³

आत्मा किसी भी भौतिक वस्तु के संपर्क में नहीं आ सकती है। ऐसा केवल इसलिए है क्योंकि आत्मा दिव्य है, और इसलिए भौतिक वस्तुओं से परे है। श्रीकृष्ण ने यह कहकर स्पष्ट रूप से व्यक्त किया कि हवा आत्मा को नहीं सुखा सकती है, न ही पानी इसे नम कर सकता है न आग इसे जला सकती है।⁴

1 "आत्मा सत्यंस्तदन्यत्सर्वं मिथ्येति"।। तत्व बोध एवं आत्म बोध (जगद्गुरु श्री शंकराचार्य प्रणीत) – नंदलाल दशोरा श्लोक 15

2 वही – पृ.स. 19

3 "स्थूल सूक्ष्म कारण शरीराद्वयतिरिक्त पंचकोषातीत सन् अवस्थात्रयसाक्षी सच्चिदानंद स्वरूप सन् यस्तिष्ठति स आत्मा" ।। वही श्लोक 16

4 श्रीमद् भगवद् गीता—डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्ता लड़कार पृ.स.—85

आत्मा को छेदा नहीं जा सकता जलाया नहीं जा सकता गीला नहीं किया जा सकता सुखाया नहीं जा सकता। यह नित्य है सबके अंदर व्याप्त है स्थिर है अचल है सनातन है।⁵

इस संसार में अनगिनत ज्ञानी पुरुष हुए हैं जिन्होंने अपनी आत्मा पाई और आत्मा को पाने के रास्ते बताए हैं। सभी ज्ञानी पुरुषों ने एकमत से यह कहा की आत्मा अमर है ना ही कभी जन्म लेती है ना ही इसकी मृत्यु होती है आत्मा सनातन है।

विज्ञानमय शरीर के अंतर में आत्मा का सूक्ष्म रूप है जो शरीर से मुक्त भी होता है।⁶ शास्त्रों में कहा गया है कि शिव में शक्ति के प्राण युक्त होने पर ही वह शिव होता है और यही आत्मा का स्थान है।

जो निष्पाप, जरारहित, अमर्त्य, शोकरहित, भूख-प्यास से मुक्त सत्यकाम, सत्यसंकल्प है उसे ही ढूँढना चाहिए उसे ही जानने की इच्छा करनी चाहिए और वह तत्व है "आत्मा"।⁷

सर्वव्यापी विराट आत्मसत्ता ही ब्रह्म है।⁸

आत्मबोध एवं तत्त्वबोध साधना का स्वरूप

"आत्मबोध और तत्त्वबोध" सदज्ञान की यह दो धाराएं हिमालय से निकलने वाली पतित पावनी गंगा और तरण तारिणी यमुना की तरह है। आत्मबोध का अर्थ है अपने उद्गम, स्वरूप उत्तरदायित्व एवं लक्ष्य को समझना, तदनुरूप दृष्टिकोण एवं क्रिया-कलाप का निर्धारण करना। तत्व बोध का अर्थ है शरीर उसके उपयोग एवं अंत के संबंध में वस्तु स्थिति से परिचित होना।⁹

"हर दिन नया जन्म हर रात नई मौत" का सूत्र आत्मबोध और तत्त्वबोध की दोनों साधनाओं का प्रयोजन पूरा करता है। प्रातः काल नींद खुलते ही हर रोज यह भावना जागृत करनी चाहिए कि आज हमारा नवीनतम जन्म हुआ है और वह सोते समय तक एक रोज के लिए ही है। इसे हर दृष्टि से श्रेष्ठतम और आदर्श रीति-नीति अपनाते हुए जिया जाए। समय का एक क्षण भी बर्बाद ना हो पाए और उसका उपयोग निरर्थक कामों में नहीं वरन जीवन को सार्थक बनाने वाले निर्वाह की उचित आवश्यकता पूरी करने वाले कार्यों की ही प्रमुखता रहे।

जो काम किया जाए उसमें पूरा-पूरा मन लगाकर करना चाहिए। हाथ में लिए काम को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर इस कुशलता के साथ संपन्न किया जाए कि उसका स्तर ऊंचा बना रहे।¹⁰

दिनभर के उत्तम काम उत्कृष्ट दृष्टिकोण रखते हुए संपन्न किए जाते रहें जिन्हें उस दिनचर्या को सार्थक बनाने वाली कहा जा सकता है। बीच-बीच में जब भी कुसंस्कारों की प्रबलता से आलस्य प्रमाद अथवा अनैतिक दृष्टिकोण का समावेश होने लगे तो उसे तत्काल रोका जाए।¹¹

5 अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च। नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥ भ. गी. 2:24

6 "अन्यो अंतर आत्मा विज्ञानमयः" तै. आ. 8-1-1 चतुर्थो-ऽनुवाकः

7 य आत्मापहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसंकल्पः सोऽन्वेष्टव्यः स विजिज्ञासितव्यः स सर्वाश्च लोकानाप्नोति सर्वाश्च कामान्यस्तमात्मानम् अनुविद्य विजानातीति ह प्रजापतिरुवाच ॥ छान्दोग्योपनिषद-8.7.1

8 "अयमात्मा ब्रह्म" बृहदारण्यकोपनिषद माण्डूक्य उपनिषद 9:2 - अथर्ववेद

9 अखंड ज्योतिः(पत्रिका)/1977/जून/ट.2.8

10 वही

11 वही

रात्रि को सोते समय यह मानकर निद्रा की गोद में जाना चाहिए कि यह जीवन के एक अध्याय का संतोषजनक अंत हुआ। अब मृत्यु जैसी शांति को गले से लगाना है। रात्रि निद्रा को दैनिक मृत्यु माना जाए।

रात्रि को सोते समय, दैनिक निद्रा को चिर-निद्रा-मृत्यु के समतुल्य मानकर चलना चाहिए। सैया पर जाते ही कल्पना करनी चाहिए कि “हर दिन नया जन्म हर रात नई मौत” जीवन सूत्र के अनुसार अब भरण काल आ गया। एक दिन का जीवन अब समाप्त हो चला। निद्रा रूपी मृत्यु अपने आंचल में प्राण को ढक लेने के लिए निकट आ गई।¹²

नित्य सोते समय अपनी मृत्यु की अनुभूति करने की भावना यदि गहरी हो तो उसके साथ ही कई प्रश्न उभरते हैं। मनुष्य जीवन ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ अनुदान होने और उसके अमानत की तरह विश्व उद्यान को समुन्नत, सुसंस्कृत बनाने के लिए दिए जाने की बात अधिक स्पष्ट रूप से समझ में आती है।¹³

प्रातः काल उठते ही एक दिन के लिए मिला जीवन रूपी सौभाग्य और उसके श्रेष्ठतम सदुपयोग की बात मनक्षेत्र पर भली प्रकार उभारी जाए। इसे आत्मबोध की योग साधना कहा जाता है।¹⁴

साँय संध्या के लिए रात्रि को सोते समय हर रात नई मौत के सूत्र को अंतः क्षेत्र में भावना पूर्वक चित्रित किया जाना चाहिए, संवेदना जितनी गहरी होगी प्रतिक्रिया उतनी ही प्रखरता पूर्वक उभरेगी।

सूर्योदय और सूर्यास्त काल को संध्या कहते हैं। उस पुण्य बेला को आत्म-साधना के लिए सुरक्षित रखे जाने का विधान है। इस प्रकार उठते समय को आत्मबोध और सोते समय को तत्त्वबोध साधना की व्यवहारिक जीवन को प्रभावित करने वाली उच्च स्तरीय साधना होती है। “हर दिन नया जन्म हर रात नहीं मौत” का जीवन सूत्र जो जितनी गहराई के साथ हृदयंगम और कार्यान्वित कर सकेगा वह उतनी ही तीव्रता पूर्वक आत्मिक प्रगति की दिशा में अग्रसर होगा यह निश्चित है।¹⁵

आत्म बोध एवं तत्त्व बोध साधना के महत्वपूर्ण अंग

“हर दिन नया जन्म, हर रात नई मौत” का यह भाव सूत्र आत्मिक प्रगति की दिशा में आगे बढ़ने में सहायक है।

आत्मिक प्रगति का भवन, चार स्तंभों के सहारे खड़ा होता है। उन आधारभूत चार पायों को 1) आत्मचिंतन 2) आत्मसुधार 3) आत्मनिर्माण 4) आत्मविकास के नाम से पुकारा जाता है।¹⁶

1. आत्मचिंतन:— आत्मचिंतन का अर्थ है— आत्मा-समीक्षा। आत्म चिंतन का अर्थ यह ढूँढना है कि परमात्मा की दी हुई विभूतियों और अमानतों का कितने अंश में सही उपयोग हुआ। हर श्रेष्ठ मनुष्य की दिनचर्या सुव्यवस्थित, श्रम की दृष्टि से स्फूर्तिवान, मानसिक दृष्टि से सक्षम, व्यवहार की दृष्टि से कुशल, चिंतन की दृष्टि से प्रखर, व्यक्तित्व की दृष्टि से आत्मावलंबी व आत्म सम्मानी होना चाहिए।

¹² वही

¹³ वही

¹⁴ वही

¹⁵ वही

¹⁶ वांगमय 12 पृ.स. 252-253 —पं श्रीराम शर्मा आचार्य

2. **आत्मसुधार**— इस प्रक्रिया को व्यक्तिगत जीवन की दुष्प्रवृत्तियों का निराकरण और सतप्रवृत्तियों का संवर्धन करके ही पूरा किया जा सकता है। यह आत्मिक प्रगति का दूसरा चरण है।¹⁷
3. **आत्मनिर्माण**— आत्मनिर्माण तीसरा चरण है। आत्मनिर्माण अर्थात् श्रेष्ठ सज्जनों के गुण—कर्म—स्वभाव की जो विशेषताएं होनी चाहिए, उनकी पूर्ति के लिए योजना बद्ध प्रयत्न। आत्मिक प्रगति के क्षेत्र में सद्गुणों के परमार्थ के गुणों को धारण करके यह प्रतिस्थापन की जाती है। व्रत धारण किए जाते हैं, श्रेष्ठता संवर्धन के संकल्प उभरे जाते हैं और उन पर चल पड़ने का अभ्यास किया जाता है, तभी इस तृतीय चरण की पूर्ति होती है।
4. **आत्मविकास**— आत्मोत्कर्ष की अंतिम भूमिका आत्मविकास की है। संत, शहीद और सुधारक इस चतुर्थ भूमिका के ही उपादान होते हैं। चौथेपन में संन्यास का विधान शास्त्रों में है। वहां तक पहुंचते-पहुंचते ज्ञान कर्म भक्ति पक जाते हैं। जीवन की नश्वरता, आत्मा का अविनाशी भाव स्पष्ट हो जाता है। सारा समाज एक कुटुंब और संपूर्ण सृष्टि अपने घर जैसी लगने लगती है। आत्मविकास की यह चतुर्थ भूमिका जितनी परिपक्व होती जाएगी, जीवात्मा उतने ही अंशों में महात्मा, देवात्मा और परमात्मा के रूप में विकसित होती चली जाएगी।¹⁸

आत्मबोध एवं तत्त्वबोध साधना की प्रक्रिया

“आत्मबोध” और “तत्त्वबोध” सद्ज्ञान की यह दो धाराएं हिमालय से निकलने वाली पावनी गंगा और तरण—तारिणी यमुना की तरह है। चेतना की सत्ता को और यथार्थता को समझना आत्मबोध और उसके काम आने वाले प्रदार्थों एवं प्राणियों के साथ उचित ताल—मेल बैठाने को तत्त्वबोध कहते हैं। यदि इतना भर ठीक तरह जान लिया जाए तो समझना चाहिए कि ज्ञान—साधना का उद्देश्य पूरा हो गया।¹⁹

आत्मबोध प्रातः कालीन अभ्यास है। प्रातः काल बिस्तर से सोकर जागते ही बिस्तर पर ही पूर्वाभिमुख, पालथी मारकर ध्यान मुद्रा में बैठे। तीन बार लंबे—लंबे सांस ले और धीरे—धीरे सांस बाहर निकाल दे, सांस इतनी गहरी ले कि वह नाभि चक्र तक भर जाए। तीन बार यह क्रिया करने के उपरांत अंगड़ाई ले और पुनः ध्यान मुद्रा में चले जाएं, अपने कष्ट को सम्मुख हुआ अनुभव करें, यह नया जन्म हुआ है। परमात्मा के दिए हुए इस उपहार को मानवोचित गरिमा के साथ जियेंगे। पिछले दिनों—जन्मों में हुई भूलों की पुनरावृत्ति नहीं होने देंगे। दिनभर की दिनचर्या ऐसी रहेगी, जिसमें सामान्य कृत्यों में भी असामान्य भावना परमार्थ परायणता के भाव जुड़े रहेंगे। मनुष्य को अन्य जीवों की तुलना में अधिक अनुदान और उपहार परमात्मा ने दिए हैं। उसे कृतज्ञता पूर्वक स्मरण रखेंगे और ऐसा कोई कार्य न करेंगे, जिससे पश्चाताप का संताप भुगतना पड़े। स्वयं को आगे बढ़ाने, ऊंचा उठाने, तथा शिष्टाचार और उदारता का भाव बनाए रखेंगे।²⁰

¹⁷ वही

¹⁸ वही

¹⁹ वांगमय 12 पृ.स. 263 —पं श्रीराम शर्मा आचार्य

²⁰ वांगमय 12 पृ.स. 264—पं श्रीराम शर्मा आचार्य

इन्हीं भावनाओं से भरे हुए सर्वप्रथम धरती माँ का तीन बार चरण वंदन करेंगे और कल्पना करेंगे कि हमारा जीवन धरती माता के समान ही सहनशील, उर्वर और परोपकारी बना रहेगा। इसके बाद शय्या का परित्याग कर दें और दैनिक कृत्य में लग जाएंगे।

रात्रि संध्या "तत्त्व बोध साधना"

तत्त्वबोध की साधना रात्रि के समय के लिए निर्धारित है। इसमें भी आत्मबोध जितना ही 15 मिनट का समय लगता है।

रात्रि को सोते समय यह मानकर निद्रा की गोद में जाना चाहिए कि वह जीवन के एक अध्याय का संतोषजनक अंत हुआ। अब मृत्यु जैसी शांति को गले से लगाना है। रात्रि निद्रा को दैनिक मृत्यु माना जाए। इससे अति महत्वपूर्ण आध्यात्मिक लाभ मिलता है। हम मृत्यु को एक प्रकार से भूले रहते हैं।

रात्रि को सोते समय, दैनिक निद्रा को चिर निद्रा-मृत्यु के समतुल्य मानकर चलना चाहिए। शैय्या पर जाते ही कल्पना करनी चाहिए कि "हर दिन नया जन्म हर रात नहीं मौत" जीवन सूत्र के अनुसार अब मरण काल आ गया। एक दिन का जीवन अब समाप्त हो चला, निद्रा रूपी मृत्यु अपने आंचल में प्राण को ढक लेने के लिए निकट आ गई।²¹

इस अवसर के लिए कल्पना यह होनी चाहिए कि शरीर में से जीव निकलकर ऊंचे प्रकाश में उठने लगा। मृत शरीर शैय्या पर पड़ा है। उसके जलाने गलाने गाड़ने की अन्त्येष्टि होने जा रही है। अपनी जीव सत्ता पृथक् है और शरीर-कलेवर का अस्तित्व उसके प्रयोग में आते रहने पर भी उससे सर्वथा भिन्न है। शरीर और आत्मा की भिन्नता यूँ कहने-सुनने में सदैव आती रहती है पर उसकी अनुभूति कभी भी नहीं होती। किसी मृत शरीर को शमशान तक पहुंचते समय उसके अग्नि संस्कार के समय शरीर आत्मा की भिन्नता, जीवन की नश्वरता एक हल्की झांकी की तरह अंतः-करण में उभरती है, किंतु कुछ ही क्षण में बिजली की कौंध की तरह विस्मृति में विलीन हो जाती है। अपनी स्वयं की मृत्यु का भावना दृश्य यदि गंभीरता पूर्वक देखा जाए, उससे आत्मज्ञान का वह प्रकाश उदय हो सकता है, जो आध्यात्मिकता का मूल आधार है। मृत्यु को निद्रा के रूप में अपनी नित्य सहचरी होने की बात सोचते हुए शयन किया जाए और उसके फलितार्थों पर विचार करते रहा जाए तो इसकी प्रतिक्रिया आत्मोत्कर्ष का पथ प्रशस्त कर सकती है।

सूर्य उदय और सूर्यास्त काल को संध्या कहते हैं। उस पुण्य बेला को आत्म साधना के लिए सुरक्षित रखे जाने का विधान है। इसी विधान की निद्रा को रात्रि और जागृति को दिन मानते हुए उनकी संधि बेला को संध्या काल कहा जा सकता है। इस प्रकार उठते समय का आत्मबोध और सोते समय का तत्त्व बोध साधना की व्यवहारिक जीवन को प्रभावित करने वाली उच्च स्तरीय साधना कहा जा सकता है। सरलता और प्रभावोत्पादक क्षमता की दृष्टि से उसे आदित्य माना जा सकता है – "हर दिन नया जन्म

²¹ वांगमय 12 पृ.सं. 265-पं श्रीराम शर्मा आचार्य

हर रात नहीं मौत" का जीवन सूत्र को जितनी गहराई के साथ हृदयंगम और कार्यान्वित कर सकेगा, वह उतनी ही तीव्रता पूर्वक आत्मिक प्रगति की दिशा में अग्रसर होगा, यह निश्चित है।²²

आत्मबोध एवं तत्त्वबोध में चिंतन मनन की विशेष भूमिका

आत्मबोध और तत्त्वबोध में चिंतन मनन की विशेष भूमिका है आत्म चिंतन मनन करने से हम अपने आपको अच्छे से जान पाते हैं। उसे समझ पाते हैं। जिससे अच्छे जीवन की कामना कर सके जीवन के लक्ष्य को साध सके और एक खुशहाल और स्वस्थ जीवन जी सके।

शास्त्र कार ने संदेश दिया है –“हे मनुष्यो! उम्र बीत जाने पर भी यदि विद्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो तो तुम निश्चय ही बुद्धिमान हो। विद्या इस जीवन में फलवती ना हुई तो भी दूसरे जन्मों में वह आपके लिए सुलभ बन जाएगी।” मनुष्य का सबसे बड़ा विवेक, गौरव और उसकी विभूति उसके विद्वता है, इससे बढ़कर और कोई संपत्ति संसार में नहीं है।²³

अध्यात्म रामायण अनुसार “मैं देह हूँ” इस बुद्धि का नाम अविद्या है। मैं देह नहीं चेतन आत्मा हूँ इसका ज्ञान प्राप्त करना ही सच्ची विद्या है।²⁴

पं . श्रीराम शर्मा आचार्य के सूक्ति कोश के अनुसार चिंतन-मनन – अपने गुण-दोष को सूक्ष्म दृष्टि से देखना अपनी मान्यताओं, आकांक्षाओं को आशीर्वाद की कसौटी पर कसना यही है चिंतन। आत्म परिष्कार के समस्त पक्षों पर समग्र दृष्टि से विचार करना और साथ ही उनसे पीछा छुड़ाने के लिए सुनिश्चित संकल्प करना मनन है।²⁵

चिंतन का विषय है— आत्म शोधन। मनन का उद्देश्य है— आत्म परिष्कार। दोनों को एक दूसरे का पूरक कहना चाहिए।²⁶

यदि हम चाहते हैं कि हमारा मन उत्कृष्ट हो और हमारी बुद्धि विकसित हो तो हमें पढ़ना कम और मनन अधिक करने की आवश्यकता है 5 मिनट तक पढ़कर 10 मिनट तक मनन करना चाहिए।²⁷

मनन में भूत पर दृष्टि रखते हुए और चिंतन में भविष्य पर विचार करते हुए वर्तमान का निर्धारण करना उद्देश्य है। एक में निराकरण है, दूसरे में संवर्द्धन। दोनों को मिलाकर ही एक पूरी बात बनती है।²⁸

चिंतन का अर्थ है— अपने स्वरूप का लक्ष्य तथा कर्तव्य का, स्पष्ट चित्र मनोभूमि में प्रखर करना। मनन का अर्थ है— जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिए अभीष्ट आदर्श का अपने जीवनक्रम में गुण, कर्म, स्वभाव

22 वांगमय 12 पृ.स. 266—पं श्रीराम शर्मा आचार्य

23 गतेऽपि वयसि ग्राह्या विद्या सर्वात्मना बुधैः। यद्यपि स्यान् फलदा, सुलभा सान्यजन्मनि ॥ आचार्यवररुचिकृता शतगाथा केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ वाराणसी प्रधान संपादक प्रो. गेशे नवड समतेन 2001

24 देहोऽहमिति या बुद्धिरविद्या सा प्रकीर्तिता। नाहं देहश्चिदात्मेति, बुद्धिर्विद्येति भण्यते ॥ अध्यात्मरामायणे अयोध्याकाण्डम् चतुर्थः सर्गः 33 गीताप्रेस गोरखपुर अनुवाद – मुनिलाल 1999

25 पं श्रीराम शर्मा आचार्य सूक्तिकोश पृ.स. 213(2/1.19)

26 वही (7/2.41)

27 वही (22/1.56)

28 वही (48/2.104)

में कितना समन्वय हो सका, इसका विश्लेषण और जो न हो उसका उसकी पूर्ति के लिए आयोजन नियोजन।²⁹

मनुष्य के उत्कृष्ट, परिष्कृत एवं विधेयात्मक चिंतन की ऊर्जा-तरंगे अपेक्षाकृत अधिक सशक्त और प्रबल होती है। आज इनका पोषण, अभिवर्धन एवं उत्सर्जन ही समग्र प्रगति, सुखद वातावरण एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए अभीष्ट है।³⁰

चिंतन की उत्कृष्टता-निकृष्टता के आधार पर व्यक्ति देव और असुर बनता है। स्वर्ग और नरक का सृजन पूर्णता मनुष्य के अपने हाथ में है। अपने भाग्य और भविष्य का निर्माण हर कोई स्वयं ही करता है। उत्थान एवं पतन की कुंजी चिंतन की दिशा को ही माना गया है।³¹

चिंतन एक अतिशक्तिशाली चुंबक है, जो अपने अनुकूल साधन और सहयोग खींच बुलाने में पूर्णतया समर्थ है। सोचने से इच्छा जगती है और संकल्प उठता है। इसके बाद पुरुषार्थ का उपक्रम चल पड़ता है।³²

उत्थान और पतन की कुंजी चिंतन की दिशा को ही माना गया है। हमें अपनी परिस्थितियों यदि उत्कृष्टता स्तर की अभीष्ट हो तो इसके लिए एक अनिवार्य शर्त यह है कि अपने चिंतन की धारा निकृष्टता की दिशा में प्रभावित होने से रोककर उसे उत्कृष्टता की ओर मोड़ दे।

निष्कर्ष

आत्मबोध स्वयं को जानने का विवेक है। आत्म तत्त्व सत्य तत्व है, यह जानने के लिए ही तत्त्व बोध साधना की प्रक्रियाएं की जाती हैं, जो हमें तत्वों का ज्ञान कराकर विवेक ज्ञान अर्थात् ऋतज्ञान प्राप्ति में सहायक है तब हमें सत्य एवं मिथ्या तत्वों का बोध होना संभव हो पता है।

गीता, उपनिषद्, वेद आदि के माध्यम से यह स्पष्ट हो जाता है कि आत्मा अजर, अमर एवं शाश्वत है लेकिन इसका संबंध अज्ञान के कारण हमारे शरीरदृ सूक्ष्म, कारण एवं स्थूल तीनों रूपों में होता है। जिससे हमारे पञ्चकोशदृ अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय एवं आनंदमय कोश प्रभावित होते हैं। अतः आत्मबोध के लिए तत्त्वबोध साधना परम आवश्यक है। जिसके लिए आत्म चिंतन, आत्मसुधार, आत्मनिर्माण एवं आत्म विकास की साधना पर विशेष बल दिया जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप हमारे कोष विकसित होकर जीव की अवस्था अवस्थाओंदृ जाग्रत स्वप्न सूक्ष्म एवं सूर्य को क्रमशः प्राप्त कर आत्मबोध संभव हो सकता है। अतः हमें प्रातः संध्या काल अथवा सुबह उठते ही प्रतिदिन आत्मबोध साधना तथा शाय संध्या काल अथवा रात्रि में सोने से तुरंत पहले तत्त्वबोध साधना अवश्य करनी चाहिए।

²⁹ वही (5/5.42)

³⁰ वही (18/2.52)

³¹ वही (28/6.61)

³² पं श्रीराम शर्मा आचार्य ऋषि चिंतन/45)